अभेद दृष्टि

ॐ ईश्वर, ईश्वर की तलाश है। जहां तक भी मालूम होता है ईश्वर ही दृष्टिकोण है। वैसे व्यवहार के अंदर भी दो दृष्टिकोण नज़र आते हैं। भेद दृष्टिकोण और अभेद दृष्टिकोण। भेद दृष्टिकोण जीव का कल्पना माना जाता है और अभेद-दृष्टिकोण ईश्वर है। भेद-दृष्टिकोण जीव है। जीव वैसे कोई जीव नहीं। दृष्टि का कोई भेद नहीं, दृष्टि दृष्टि है। जब महदूद अवस्था से देखता है तो जीव दृष्टि होता है, भिन्न-भिन्न अनुभव करता है, अलहदा प्रतीत होता है। भेद दृष्टिकोण होता है। वह जीव दृष्टिकोण है यह इसके विपरीत एकत्व भाव अभेद है यह अभेद-दृष्टिकोण हर किसी के अंदर होता है। यदि अभेद-दृष्टि का अभाव हो तो भेद दृष्टि सिद्ध हो ही नहीं सकता। यह भेद दृष्टिकोण अभेद-दृष्टिकोण से ही सिद्ध होता है और किसी से सिद्ध हो ही नहीं सकता। भेद दृष्टि की सिद्धि के लिए अभेद-दृष्टिकोण की आवश्यकता है। यह स्वयं सिद्ध है। अभेद से ही भेद सिद्ध होगा, अभेद न हो तो भेद कभी सिद्ध हो ही नहीं सकता।

इसलिए यह ईश्वर दृष्टिकोण ही अभेद दृष्टि को धारण करता है। इसे अज्ञान समझ लो या पुष्टि, संस्कार समझ लो, वास्तव में ईश्वर ही अभेद दृष्टि है। जिसकी दृष्टि अभेद हो जाती है, यह सृष्टि सारी ईश्वरमय हो जाती है और दृष्टि अभेद होता है यह सब ईश्वर रूप हो जाता है, प्रकृतिमय हो जाता है। प्रकृति में अभिन्नता अभेद दृष्टि से होता है। भेद दृष्टि ही भिन्नत्व को सिद्ध करता है। इसके विपरीत अभेद दृष्टि है जो ईश्वरत्व को सिद्ध करता है। जब तक अभेद दृष्टि नहीं होती है तब तक ईश्वर का कोई ज्ञान नहीं होता। होता हूता कुछ भी नहीं वास्तव में। जैसे मैं पहले कह चुका भेद दृष्टि की सिद्धि अभेद दृष्टि के बिना कभी भी नहीं हो सकती। यह जो भेद है, यह उसी सूरत में पैदा होगा जब अभेद मौजूद हो। अभेद मौजूद न हो तो भेद कभी भी सिद्ध नहीं हो सकता किसी भी सूरत में। तो इसके पीछे वह भेद दृष्टि के पीछे वह अभेद दृष्टि छिपा हुआ है। लक्ष्य तो वही है।

तमाम संसार का लक्ष्य अभेद दृष्टि है, मगर अज्ञान की वजह से मनुष्य इस रहस्य को समझता नहीं। न समझने पर भेद दृष्टि को लेकर बढ़ता है। भेद दृष्टि में महदूद अवस्था होता है। महदूद अवस्था होते ही हमारा जो व्यापक दृष्टिकोण होता है, यह ओझल हो जाता है। जैसे यह कंध दीवार है, इस कंध पर एक बिन्दु लगा दें तो वह कंध की व्यापकता कभी नज़र नहीं आएगा। बिन्दु नज़र आएगा। दीवार पर बिन्दु लगा दिया जाए वह बिन्दु नज़र आएगा, दीवार की व्यापकता कभी नज़र नहीं आता। इसी तरह भेद जब पैदा होता है तो अभेद दृष्टि पर एक बिन्दु लग जाता है, तो फिर वह बिन्दु ही बिन्दु नज़र आता है, भेद ही भेद नज़र आने लगता है। यह भेद दृष्टि ही बंधन का कारण है।

किसी भी प्रकार जो भेद दृष्टि का भेदन जो जाए, हमारे अंदर अभेद दृष्टि जागृत हो जाए तो हमारे अंदर छिपा हुआ अभेद दृष्टि प्रकट हो जाएगा। और हमारा कल्याण होने में कसर नहीं रहेगा। वह कहीं से लाने की ज़रूरत नहीं। मैं पहले कह चुका वह पहल से ही हमारे अंदर मौजूद है। उसके अभाव के अंदर भेद दृष्टि कभी भी सिद्ध नहीं होगा। जितने भेद दृष्टि होता है, अभेद दृष्टि की वजह से भेद दृष्टि सिद्ध होता है। यदि अभेद दृष्टि जागृत हो जाए तो भेद दृष्टि उसी समय खत्म हो जाएगा। कल्पना के ज़रिए से ही भेद दृष्टि उत्पन्न होता है। यह बिंदु लग जाता है वह कल्पना ही होता है। इस बिन्दु को हटा दिए जाए, कल्पना को मिटा दिया जाए, तो वह दीवार तो वैसे पहले ही व्यापक है, पहले ही अभेद है। वह कल्पना हटा दिया जाए तो वह अभेद दृष्टि ही जागृत होगा। वह हमेशा हरेक के अंदर रहता है। ज़्योंकि हरेक मनुष्य भेद भावना चाहता नहीं। कोई भी नहीं चाहता। जिनके साथ भी संग करते हो, अभेद होने की कोशिश करते हो। जिसका हम संग करते हैं, हम समझते हैं, चाहते हैं, हमारे जैसा ही वह हो। हमारे जैसा हो, हमारे जैसा स्वभाव वाला हो, दूसरे से ही हम यही चाहता है ज़्योंकि यह एक अभेद दृष्टि है जो हमारे सब के अंदर छिपा हुआ है। मगर वह जाग्रत न होने की वजह से अभेद दृष्टि के व्याज से हम भेद दृष्टि को अपना लेते हैं। यह बंधन का कारण होता है।

किसी भी ढंग से, किसी भी साधना से यह अभेद दृष्टि समाप्त हो जाए तो बाकी जो बचा होगा वह अभेद दृष्टि है। और कुछ भी नहीं बचेगा। वही अभेद दृष्टि है, वही ईश्वर स्थिति है। ईश्वर स्थिति होना ही अभेद दृष्टि की आवश्यकता है। ज़्योंकि ईश्वर के अंदर कोई भेद नहीं हो सकता। यदि ईश्वर के अंदर भेद मान लिया जाए तो ईश्वर ईश्वर नहीं होगा। एक किस्म के जीव कोटि का, जीव कोटि से भी गिरा हुआ माना जाएगा। तो कहने का मतलब है कि अभेद दृष्टि ही वास्तव में ईश्वर दृष्टि है। वह हमेशा हर जगह छिपा हुआ है। छिपा हुआ होने की वजह से अभेद के, सिर्फ अभेद के हम इच्छुक हैं।

जितना व्यवहार तुम करते हो, गहराई से देखना पड़ेगा हम दूसरे के साथ जैसा व्यवहार चाहता है जैसा हम हों। हमारे वाली वस्तु हो, हमारा स्वभाव हो, हमारे वाला गुण हो। यह एक अभेद दृष्टि है। हर मनुष्य के पीछे छिपा हुआ है। हर मनुष्य का यह स्वभाव है। पशु के अंदर भी यह स्वभाव छिपा हुआ है। वह ही यही चाहता है कि हमारे जैसा यह व्यवहार करें। उसके अन्त:करण का हमें पता नहीं; मगर गहराई से देखें तो वह भी यही चाहता हैं कि हमारे जैसा व्यवहार हो। जैसे हम हैं, उससे भिन्न व्यवहार को वह भी बर्दाश्त नहीं करता। यह अभेद दृष्टि है। हमारे अंदर छिपा हुआ है। अज्ञान की वजह से या भेद दृष्टि की प्रबलता की वजह से वह जाग्रत नहीं हो रहा। जितने भी अनुसंधान करते हैं, साधना करते हैं, भज़्ति करते हैं, उसका उद्देश्य यही है कि जब तक यह अभेद दृष्टि नहीं जाग्रत होता, तब तक सब साधना, अनुसंधान, भज़्ति अधूरा माना जाएगा। वेदांत साधना, योग साधना या कुछ भी साधना, सारी की सारी साधना, कुछ भी कर लो यह अपूर्ण माना जाएगा। पूर्ण तभी माना जाएगा जब पूर्णत्व जाग्रत हो।

पूर्णत्व कहां है? अभेद के अंदर ही तो पूर्णत्व है। भेद, के अंदर कभी पूर्णत्व पैदा हो सकता है? भेद पैदा ही अपूर्णता की वजह से होता है। जब तक भेद दृष्टि है, कभी भी, वह शांति, चैन नहीं मिलेगा। अभेद दृष्टि ही पूर्णत्व है और भेद दृष्टि अपूर्णता है। अपूर्ण में बंधन होता है, पूर्ण में बंधन नहीं होता। भेद के अंदर ही बंधन होता है, अभेद के अंदर कभी बंधन नहीं होता, पूर्ण स्वतंत्र होता है। भेद बंधन कराता है। जहां तहां भी बंधन तुज़्हें

नज़र आता है, गहराई से देखो वह भेद बुद्धि ही उस बंधन का कारण होगा और जहां तहां भी तुझें मुज़्ति प्रतीत होगा वह अभेद दृष्टि की वजह से ही होगा। अभेद दृष्टि के अंदर राग–द्वेष, वैर–विरोध, अपना बनाने की इच्छा यह कहीं भी पैदा नहीं होगा। वह बिल्कुल शांत होता है। वही मुज़्ति का कारण होता है। इसके विपरीत जितनी भेद–दृष्टि है महदूद अवस्था है। महदूद अवस्था में बंधन होता है, राग–द्वेष होते हैं, वैर–विरोध होता है, खींचा तानी होती है। अनेक प्रकार के उपद्रव खड़ा हो जाता है। अन्तःकरण की स्थिरता जो है वह बिल्कुल नष्ट हो जाता है। अन्तःकरण के अंदर जो स्वत्व, जो सच का स्वभाव है वह भी बिल्कुल खत्म हो जाता है। जलन–ईर्ष्या पैदा हो जाता है, डाह पैदा हो जाता है। यह सारे भेद दृष्टि से पैदा होता है। यही सब बंधन का कारण होता है। इसके विपरीत अभेद दृष्टि यदि जाग्रत हो जाए तो ये सारे खत्म हो जाएंगे। ज्ञान दृष्टि भी इसे कहते हैं।

ज्ञानाग्नि दग्ध–कर्माणं तमाहुः पंडितं बुधा ङ्क१९ङ्क अध्याय ४ गीता, (उस ज्ञानरूपी अग्नि में दग्ध हुए कर्मों वाले पुरूष को बुद्धिमान लोग पंडित कहते हैं।) ज्ञान रूपी अग्नि से जिसने कर्मों को बश में किया है, पंडित वही होगा। तो कहने का हमारा मतलब है कि वह ज्ञान की अग्नि ज़्या है? यह अभेद दृष्टि ही ज्ञान अग्नि है। प्रत्यक्ष नज़र आता है, हर प्रकार का उपद्रव भेद दृष्टि से पैदा होता है। इसके विपरीत अभेद दृष्टि जो है कि हर किस्म के उपद्रवों को शांत कर देता है। वह हमारे अंदर है। ऐसा नहीं कि वह हमारे अंदर नहीं। मैं पहले उदाहरण दे चुका हूं कि हर कोई चाहता है जैसे हम हैं, हर कोई हमारे साथ वैसा ही व्यवहार करे। जैसा हम दूसरे से अपने साथ व्यवहार किया जाना चाहते है, तो हमारा भी फर्ज़ है हम दूसरों से वैसा ही व्यवहार करें। यह अभेद दृष्टि है। यह जाग्रत हो जाएगा। कुछ दिन के अज़्यास के बाद यह अभेद दृष्टि जो हमारे अंदर सोया हुआ है, यह जाग्रत हो जाएगा। यह जाग्रत होते ही भेद दृष्टि अपने आप खत्म हो जाएगा। फिर जहां कभी भी आंख खोलकर देखेगा, तो ईश्वर ही ईश्वर नज़र आएगा।

जिसे ब्रह्म कहते हो, ईश्वर कहते हो, भगवान कहते हो, वह कहीं दूर नहीं है। हमारे अंदर ही है। वह अभद दृष्टि यदि जाग्रत हो गया तो यह सृष्टि सारी ईश्वरमय नज़र

आएगी। इसके विपरीत जब हमारे अंदर भेद दृष्टि जाग्रत होता है, इसे मोटे तौर पर जीव दृष्टि कहते हैं, उसके अंदर भेद रहता है। भेद के कारण अज्ञान रहता है, अज्ञान के कारण बंधन रहता है जिसे हम बिल्कुल नहीं चाहते। जैसे मैं पहले कह चुका हूं स्वतंत्र होना हर कोई चाहता है, स्वतंत्रता हर कोई चाहता है। यह उसी सूरत में होगा जहां अभेद दृष्टि है। भेद दृष्टि में स्वतंत्रता कहां? वह तो बंधन है। बांधा किस चीज को जाता है जो महदूद होता है, सीमित होता है उसे ही बांधा जा सकता है। जो अभेद हो, महदूद न हो, लामहदूद हो तो लामहदूद (असीम) को कौन बांध सकता है? कोई नहीं बांध सकता। इसके विपरीत यह भेद दृष्टि होता ही बंधन का कारण है।

शास्त्रकारों ने महात्मा लोगों ने या जिन लोगों ने इस रहस्य को समझा है, सबने चिल्ला कर कहा है कि इस अभेद दृष्टि को जाग्रत करने की कोशिश करो। जितना भुक़्ति भक़्ति सब कुछ करते हो, इसका उद्देश्य यह है कि भक़्ति वगैरा करने से मनुष्य को कुछ एकाग्रता मिलता है। वह एकाग्रता के ज़रिए से अभेदता दृष्टि प्राप्त करता है। जैसे जैसे मन को तुम एकाग्र बनाओगे तो मन में अभेद दृष्टि जागृत हो जाएगा। कि एकाग्रता न होने पर भेद दृष्टि फैलता है। भेद तभी पैदा होता है जब एकाग्रता न हो। इसके विपरीत जब एकाग्र हो जायेंगे तो भेद दृष्टि खत्म हो जाएगा और अभेद दृष्टि जाग्रत होता जाएगा, जो हमारा लक्ष्य है। संसार के अंदर भेद दृष्टि कोई नहीं चाहता क़्योंकि भेद दृष्टि का परिणाम दुख होता है। दुख को कौन चाहता है? कोई नहीं चाहता, एक भी जीव या प्राणी दुख को नहीं चाहता है, मगर ऐसा क़्यों होता है? भेद दृष्टि से दुख होता है। भेद दृष्टि जब तक है सुख कभी भी नहीं हो सकता। उसके विपरीत जब अभेद दृष्टि जाग्रत हो जायेगा, दुख के लिए गुंजायश ही नहीं होता। जहां अभेद अवस्था है, दुख के लिए कोई गुंजायश ही नहीं रहता। न ही यहां सुख के लिए व्यावहारिक गुंजायश होता है।

एक अखण्ड स्थिति होता है, अखण्डानंद होता है। वह कोई महदूद आनंद नहीं। वह कभी प्रकृति द्वारा पैदा होने वाला आनंद नहीं, गुणों की प्रतीति से पैदा होने वाला आनंद नहीं। क़्योंकि गुणों से आनंद की जो प्रतीति होती है वह सब महदूद होती है। यह

खत्म हो जायेगा, कायम नहीं रह सकता। इन पदार्थों की अपेक्षा न रखते हुए एक आनंद हमारे अंदर छिपा हुआ रहता है जो अभेद दृष्टि से जागृत होता है। वही हमारा लक्ष्य है। तमाम दुनिया इसी के लिए कोशिश करता है। रातदिन इसी के लिए कोशिश करता है। मनुष्य उसे प्राप्त करने की कोशिश करता है, मगर कामयाब नहीं होता। उस गल्ती को सुधारने के लिए शास्त्रकारों ने महान लोगों ने हमें शिक्षा दिया है। गल्त ढंग पर ही चलना हो, दुनियां सारी ही गल्त ढंग पर चलता है, उसके लिए शास्त्र की कोई ज़रूरत नहीं। ज़रूरत यदि पड़ा तो सही रास्ते पर चलने के लिए शास्त्र का ज़रूरत पड़ा।

भिन्नत्व को देखना है तो दुनिया में हर कोई भिन्नत्व को देखता है। हर जीव भिन्नत्व को देखता है। इसके लिए शास्त्र की कोई आवश्यकता नहीं होती। यदि शास्त्र की ज़रूरत पड़ा तो इसीलिए पड़ा कि इस आनंद को जाग्रत करना है। इस अभेद दृष्टि की ओर ही शास्त्र का इशारा होता है। यदि अभेद दृष्टि को छोड़ दिया जाये तो शास्त्र की कोई वैल्यू नहीं; कोई कीमत नहीं। कहने का मतलब है कि शास्त्र के रहस्य को समझना हो तो अभेद दृष्टि की तरफ बढ़कर देखो। अभेद दृष्टि की ओर तुम बढ़ोगे तो फिर तुम देखोगे कि शास्त्रों में वही सब लिखा हुआ है। यदि हर कोई वैर–विरोध करता है, अपनों से भिन्न घृणा करता है, राग–द्वेष करता है तो उसके लिए शास्त्र की ज़्या आवश्यकता है। जन्म से ही ऐसा होता है। एक छोटा सा बच्चा है। वह भी भेद दृष्टि रखता है। इसके लिए भिन्न–भिन्न शास्त्रों की ज़्या ज़रूरत है? यदि शास्त्रों की ज़रूरत पड़ा तो इसी भेद दृष्टि को छोड़ने के लिए ही पड़ा। इसी भेद दृष्टि को छोड़ने के लिए ही पड़ा। भेद दृष्टि का भेदन करने के लिए ही ज़रूरत पड़ा। वह है अभेद दृष्टि को जागृत करना।

भेदन करने का मतलब यह नहीं कि इससे नफरत करें या उसे उठाना या खत्म करना, नहीं। भेदन करने का मतलब अभेद दृष्टि को जाग्रत करना है। यह अभेद दृष्टि जाग्रत होगा तो वह भेद दृष्टि खुद–ब–खुद लय होता जाएगा, अभेद दृष्टि की शज़्ल धारण कर लेगा। यह जो भेद दृष्टि है वह तुज़्हारे अंदर छिपे हुए अभेद दृष्टि का शज़्ल धारण कर लेगा। भेद बिल्कुल नहीं रहेगा। यही शांति का स्थान है। यहीं जाकर शांति मिल सकता है।

जितने वेदादि शास्त्र हैं या भिन्न-भिन्न शास्त्र है, गहराई से अनुसंधान करके देखें तो सब इसी तरफ इशारा करते हैं। इसे छोड़ दिया जाए तो शास्त्र का वैल्यू कीमत नहीं होता।

इसीलिए कहने का मतलब है कि अभेद दृष्टि को जाग्रत करने का कोशिश करो, इसी में ही कल्याण है। भजन करते हो, कीर्तन करते हो तो एकाग्र करना ही उसका उद्देश्य है। मन को एकाग्र करना ही एक मात्र उद्देश्य है। यही इस सब क्रिया का उद्देश्य है। एकाग्र शब्द का अर्थ अच्छी तरह समझ लेना चाहिए, एक और अग्र-अग्रता, अग्रता का माअना अखीरी होता है (हंस कर विषय को सरल बनाते हुए। अखीरी एक होना ही एकाग्रता है और कोई भी काम नहीं होगा। कोई भी काम करेंगे तो एकाग्रता होने पर उसका अखीर ही होगा। जब तक एकाग्र नहीं होता, अखीरी नहीं होता, कोई भी काम कर लो, आनंद नहीं मिलेगा। जब आनंद मिल गया तो एकाग्रता सिद्ध होगा। नहीं तो एकाग्रता कभी सिद्ध नहीं हो सकेगा। अखीरी एक बनते ही उसका आनंद मिलेगा। उससे पहले नहीं मिल सकता किसी भी सूरत में। सच्चा आनंद प्राप्त करना है तो उसके साथ सज़्मेल रखना पड़ेगा, तन्मयता करना पड़ेगा। तभी आनंद मिलेगा। जब तक तन्मयता नहीं होता उसका आनंद कभी मिल नहीं सकता। तन्मयता एकाग्रता से सिद्ध होता है। अखीरी जाकर एकाग्रता से ही हर काम सिद्ध होता है। उससे पहले काम की पूर्ति नहीं माना जाता है। इसका मतलब है एक बन जाना। यही उसका लक्ष्य है। जब तक एक नहीं बनता, एकाग्र नहीं माना जायेगा। एकाग्रता का लक्षय ही यही है।

इसीलिए हमारा कहने का मतलब है - भजन करते हो, कीर्तन करते हो, इसका उद्देश्य को समझो। आखिर तो एक बनना ही पड़ेगा। एकाग्रता का मतलब है, अग्र, अग्र माअना अखीरी को कहता है। अखीरी जो एक बन जाना, वही एकाग्रता होगा। जब तक एक नहीं बनता, तब तक एकाग्रता का अर्थ ही पूरा नहीं होता। जब एक बन जाएंगे तो एकाग्रता के रहस्य को तुम समझ जाएगा। एक बनने से ही कल्याण होगा। अकल्याण है। अकल्याण कहां है? जब एक से भिन्न देखता है तो वह अकल्याण है। भिन्नत्व को देखना ही अकल्याण है। अभिन्नता को देखेगा तभी कल्याण है। इसलिये हमारा मतलब है कि

अपने अंदर छिपे हुए उसे अभिन्न भाव को जाग्रत करने का कोशिश करो। उसी में कल्याण है और कोई कल्याण होने का तरीका नहीं।

卐 बोल स्वामी जी महाराज की जय 卐

''<u>अपराजिता मन्त्र</u>''

ॐ ज़्लीं बले अबले महाबले

असिद्ध साधिनी स्वाहा ज़्लीं ॐ।

''<u> बगलामुखी मन्त्र</u>''

ॐ हलीं बगलामुखि सर्व दुष्टाणाम्

वाचम् मुखम् पदम स्तज़्भय

जिहवाम् कीलय बुद्धिं